सितंबर 1995 (पी -1). ऐसा नहीं किया गया और परिणामस्वरूप याचिकाकर्ता प्रति वर्ष 4% की दर से दंडात्मक ब्याज का भुगतान करने के लिए निर्धारित ऋण राशि के गलत उपयोग का मामला।

(6)पंजाब फाइनेंशियल के नियम 10.15 का विवाद नियम, खंड- I, भाग- I, ब्याज के संबंध में लागू है अग्रिम, हम इस विचार के हैं कि वही तथ्यों के प्रति आकर्षित नहीं है वर्तमान मामले के कारण क्योंकि नियम प्रश्न से नहीं निपटते हैं दंडात्मक ब्याज की। उपर्युक्त नियम केवल यह दर्शाता है कि ब्याज अग्रिमों पर ऐसी दरों पर शुल्क लिया जाना चाहिए जो सरकार द्वारा समय-समय पर तय की जा सकती हैं।

(7)उपरोक्त कारणों से रिट याचिका की अनुमति है और आदेश दिनांक 6 जनवरी, 2006 (पी -3) और 3 मार्च, 2006 (पी -5) को हटा दिया जाता है. उत्तरदाताओं को दंड की गणना करने के लिए निर्देशित किया जाता है 10% के बजाय 4% प्रति वर्ष की दर से ब्याज और बढ़ाएँ उसी के अनुसार मांग. अधिक में दंडात्मक ब्याज की राशि के मामले में 4 याचिकाकर्ता से प्रति वर्ष पहले ही बरामद कर लिया गया है और वह धनवापसी का हकदार पाया जाता है, वही उसे वापस कर दिया जाएगा आज से दो महीने की अवधि के भीतर।

(8)रिट याचिका के तद्अनुसार निपटाया जाता है।

R.N.R.

न्यायमूर्ति एम. एम. कुमार और एम.एम.एस. बेदी के समक्ष

गुरदेव सिंह, — *याचिकाकर्ता*

बनाम

हरियाणा राज्य और अन्य, — *उत्तरदाता*

C.W.P. सं. 7298 सन् 2006

3 अगस्त, 2006

भारत का संविधान, 1950 — हरियाणा सिविल सेवाएं (दण्ड एवं अपील) नियम, 1987 — नि.7 — कर्तव्य से जानबूझकर अनुपस्थिति — जांच अधिकारी ने याचिकाकर्ता को 10 सितंबर, 1997 से 21 दिसंबर, 1997 तक कर्तव्य से अनुपस्थित होने के आरोप में दोषी पाया — 1 जनवरी, 1998 से 24 सितंबर, 1998 की अवधि के संबंध में अनुपस्थिति का कोई आरोप नहीं और न इस संबंध में कोई अवसर दिया गया — दण्ड प्राधिकारी ने याचिकाकर्ता को बाद की अवधि में कर्तव्य से अनुपस्थिति के संबंध में भी दोषी भी दोषी पाया — नैसर्गिक न्याय के सिध्दांतो का उल्लंघन - याचिकाकर्ता ने दावा किया है कि उसने दूसरी अवधि में अनुपस्थिति के

सबंध में अवकाश के लिए आवेदन भेजा है — रिकॉर्ड पर कुछ भी नहीं पाया गया की याचिकाकर्ता अपने प्रधान के किसी भी आदेश की अवज्ञा करता हो — याचिकाकर्ता ने 24 साल की सेवाएं प्रदान की — याचिका अनुज्ञात करते हुए पदच्युति के आदेश को परिवर्तित करके याचिकाकर्ता की अनिवार्य सेवाएंनिवृत्ति।

अभिनिर्णित, कि दंड प्राधिकरण ने ध्यान में रखा था 1 जनवरी, 1998 से 24 सितंबर, 1998 की अवधि में याचिकाकर्ता कर्तव्य से अनुपस्थिति था जिसका कारण उसने अपनी खोज में दर्ज किया कि याचिकाकर्ता ने कारण हेतुक दर्शित सूचना के उत्तर में अपनी अनुपस्थिति स्वीकार की है। यह 10 सितंबर,1997 से 21 दिसंबर, 1997 के तीन महीने की अनुपस्थिति की अवधि के अतिरिक्त है जिसके लिए अकेले अपराध दर्ज किया गया था। हालाँकि, याचिकाकर्ता द्वारा भेजे गए उत्तर के पैरा 1 दर्शाता है कि यह स्वीकारोक्ति नहीं होगी क्योंकि याचिकाकर्ता ने अपने बेटे के माध्यम से अवकाश आवेदन भेजने का दावा किया है। इस निष्कर्ष का अनुमान नहीं दिया गया कि याचिकाकर्ता ने अपने कार्यकाल में अनुपस्थिति स्वीकार की है और न ही 1 जनवरी, 1998 से 24 सितंबर, 1998 की अवधि के संदर्भ में ऐसे निष्कर्ष पर आया जा सकता है। यह अच्छी तरह से स्थापित है कि वह कथन को स्वीकारोक्ति माना जाता है उसे समग्र रूप से पढ़ा जाना चाहिए और संदर्भ से बाहर नहीं फाड़ा जा सकता है। हम आगे पाते हैं कि किसी भी आदेश की अवज्ञा करने के लिए अपमान का आरोप साबित नहीं हुआ क्योंकि उसके प्रभाव में रिकॉर्ड पर कोई साक्ष्य नहीं है।

(पैरा 11)

सोनिया जी सिंह, अधिवक्ता, याचिकाकर्ता के लिए.

हरीश राथे, सीनियर. डीएजी, हरियाणा, उत्तरदाता के लिए.

निर्णय

नययमूर्ति, एम. एम. कुमार.

(1) यह याचिका संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत श्री गुरदेव सिंह, पटवारी द्वारा दायर की गई जिन्होंने आदेश दिनांक 15 जून, 1999 (P-1), जिसमे याचिकाकर्ता को विभागीय जांच द्वारा कर्तव्य से अनुपस्थिति का दोषी पाते हुए याचिकाकर्ता को सेवाएं से बर्खास्त कर दिया गया, को रद्द करने के लिए प्रार्थना की है। अपीलीय प्राधिकरण द्वारा पारित आदेश दिनांक 9 अगस्त, 2000 (P-2) भी चुनौती का विषय है, तथा संशोधन प्राधिकरण द्वारा पारित आदेश दिनांक 6 नवंबर, 2003 (P-3), तथा समीक्षा आवेदन (P-4) पर पारित किया गया

आदेश दिनांक 24 सितंबर, 2004 भी।

(2) संक्षिप्त तथ्यों को पहले देखे जा सकते हैं। याचिकाकर्ता फरवरी, 1975 में प्रतिवादी के विभाग में शामिल हुआ था। उसका काम और आचरण अच्छा या बहुत अच्छा पाया गया है। हालांकि, 10 सितंबर, 1997 से 21 दिसंबर, 1997 तक याचिकाकर्ता कर्तव्य से अनुपस्थित पाया गया जब वह पटवारी हलका खेड़ी सराफ़ अली, तहसील असंध, जिला करनाल के रूप में काम कर रहे थे। तदनुसार, उन्हें हरियाणा सिविल सेवाएं (दण्ड एवं अपील अपील) नियम, 1987 (संक्षिप्तता के लिए, 'नियम') के नियम 7 के तहत आरोप-पत्र दिया गया। उनके खिलाफ निम्नलिखित चार आरोप लगाए गए थे: —

"1. कि वह अपने हक्का से 10 सितंबर, 1997 से 21 दिसंबर, 1997 तक लगातार बिना अवकाश / अंतरंगता के लिए आवेदन दिये अनुपस्थित रहा।

2. वह एसडीओ (सी) करनाल, — 30 सितंबर, 1997 को उनके पत्र के अनुसार, उनके स्पष्टीकरण के लिए बुलाया गया। उन्होंने न तो अपना स्पष्टीकरण दिया और न ही हलका में वह प्रस्तुत हुए।

3. कि उन्होंने कभी अपने काम में दिलचस्पी नहीं ली, जिस से छबीलदास, पटवारी को हलका का प्रभार दिया गया था।

4. कि श्री गुरदेव सिंह, पटवारी शेष अनुपस्थित होने में, सरकारी कार्यों में रुचि न लेने में और अवज्ञाकारी होने में अभ्यस्त हैं"

(3) याचिकाकर्ता ने आरोप-पत्र का कोई जवाब नहीं दिया और उसके बाद उप-मंडल अधिकारी को उपरोक्त आरोपों की सत्यता के बारे में पूछताछ करने के लिए जांच अधिकारी के रूप में नियुक्त किया गया। जांच अधिकारी ने 13 फरवरी, 1999 को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की और इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि याचिकाकर्ता आरोपों का दोषी था क्योंकि वह 10 सितंबर, 1997 से 21 दिसंबर, 1997 तक कर्तव्य से अनुपस्थित रहे। प्रतिवादी सं. 3, कलेक्टर, करनाल, जो याचिकाकर्ता के दण्ड प्राधिकारी है, ने याचिकाकर्ता को 19 मार्च, 1999 को दूसरा कारण निदर्शन नोटिस दिया, जिसका विधिवत उत्तर याचिकाकर्ता द्वारा 2 जून, 1999 को दिया गया था। कारण हेतुक दर्शित सूचना के उत्तर पर विचार करने के बाद, दण्ड प्राधिकरण ने याचिकाकर्ता को व्यक्तिगत सुनवाई का एक अवसर प्रदान किया। दण्ड प्राधिकरण ने एक अतिरिक्त निष्कर्ष दर्ज किया कि याचिकाकर्ता ने 10 सितंबर, 1997 से 21 दिसंबर, 1997 तक और 1 जनवरी, 1998 से 24 सितंबर, 1998 तक कर्तव्य से अनुपस्थिति के उत्तर में स्वीकार किया

कि वह बीमारी के कारण सरकारी कर्तव्य को कुशलता से करने में असमर्थ थे। उपर्युक्त तथ्यों को ध्यान में रखने के बाद, दण्ड प्राधिकारी ने याचिकाकर्ता को सेवा से पदच्युत करते हुए आदेश दिनांक 15 जून, 1999 (P-1) पारित किया। आदेश के प्रवर्ती पैरा को संदर्भ की सुविधा के लिए यहां पुन:पेश किया जाता है: —

"श्री. गुरदेव सिंह, पटवारी ने इस कार्यालय में दूसरे कारण हेतुक दर्शित सूचना में अपना जवाब 2 जून, 1999 को प्रस्तुत किया और उनके जवाब में, इस अधिकारी ने स्वीकार किया कि वह 10 सितंबर, 1997 से 21 दिसंबर, 1997 और 1 जनवरी, 1998 से 24 सितंबर, 1998 बीमारी के कारण अनुपस्थित थे और, पत्र दिनांक 30 सितंबर, 1997 के माध्यम से मांगा गया स्पष्टीकरण देने में वह असमर्थ थे और सरकारी कर्तव्य कुशलता से करने में वह असमर्थ था लेकिन उन्होंने अपने उत्तर के साथ कोई चिकित्सा प्रमाण पत्र नहीं जमा किया जिसमें से यह लिया जा सकता है कि वह बीमार था। इस पटवारी को 15 जून, 1999 को व्यक्तिगत सुनवाई दी गई।

आज 15 जून, 1999 को मैंने श्री गुरदेव सिंह पटवारी, हलका खेड़ी सराफ़ अली, तहसील असंध को सदर कानुंगो, करनाल की उपस्थिति में व्यक्तिगत रूप से सुना। व्यक्तिगत सुनवाई के दौरान कर्मचारी कोई स्पष्टीकरण देने में असमर्थ थी और न ही उसने कोई चिकित्सा प्रमाण पत्र पेश किया है। तो यह स्पष्ट है कि श्री गुरदेव सिंह पटवारी अनुपस्थित रहे अपने क्षेत्र, खेड़ी सराफ़ अली अली से और न ही उन्होंने सरकारी कर्तव्य में कोई दिलचस्पी दिखाई है। मैं समझता हूं कि श्री गुरदेव सिंह पटवारी ने खुद को क्षेत्र से जानबूझकर अनुपस्थित किया, उच्च अधिकारियों के आदेशों की अवज्ञा की और सरकारी कर्तव्यों में रुचि न लेने में अभ्यस्त हैं। इस प्रकार वह अपने क्षेत्र से एक वर्ष यानी 370 दिन से अधिक बिना किसी अवकाश के आवेदन और जानकारी के अनुपस्थित रहा है और वह पूरी तरह से दोषी है। ऐसे कर्मचारी को रखने के लिए न तो सरकार के लाभ में है और न ही लोगों के लिए लाभकारी है।

तो, मैं दविंदर सिंह, I.A.S., कलेक्टर करनाल, इसके द्वारा श्री. गुरदेव सिंह, पटवारी, हलका खेड़ी सराफ़ अली, तहसील असन्ध को सेवा से पदच्युत करने का दण्ड देता हूँ।"

(4) उपरोक्त आदेश को निमयो के नियम 9 के तहत अपील में चुनौती दी गई थी और 9 अगस्त, 2000 को आयुक्त, रोहतक रेंज, रोहतक ने अपील को खारिज कर दिया (P-2)। याचिकाकर्ता ने तब प्रावधानों के नियमों के नियम 13 के तहत संशोधन के उपाय का लाभ उठाया परंतु राजस्व विभाग के वित्तीय आयुक्त और सरकार के प्रधान सचिव, हरियाणा ने आदेश दिनांक 6 नवंबर, 2003 (P-3) द्वारा भी इसे खारिज कर दिया गया था। — के लिए व्यापक आदेश. याचिकाकर्ता ने समीक्षा आवेदन दर्ज करने का असफल प्रयास भी किया, जिसे 24 सितंबर, 2004 (P-4) को खारिज कर दिया गया था।

(5) उत्तरदाताओं द्वारा लिया गया प्रमुख दावा यह है कि यह स्थापित होचुका है कि याचिकाकर्ता सितंबर, 1997 से 21 दिसंबर, 1997 तक और 1 जनवरी, 1998 से 24 सितंबर, 1998 तक, जो लगभग 370 दिन है, कर्तव्य से अनुपस्थित था। लिखित बयान में आगे यह भी कहा गया है कि याचिकाकर्ता ने दूसरे कारण हेतुक दर्शित सूचना के जवाब में यह स्वीकार किया गया है, जिसे लिखित बयान के साथ रिकॉर्ड अनुलग्नक R-1 के रूप में पेश किया गया है।

(6) सुश्री सोनिया जी सिंह, याचिकाकर्ता के लिए विद्वक अधिवक्ता ने तर्क किया है कि आरोप-पत्र में याचिकाकर्ता पर आरोप लगाया गया है कि वह 10 सितंबर, 1997 से 21 दिसंबर, 1997 बिना अवकाश आवेदन दिए कर्तव्य से अनुपस्थित रहा। विद्वक अधिवक्ता के अनुसार, 1 जनवरी, 1998 से शुरू होने वाली 24 सितंबर, 1998 तक की अवधि के संबंध में कर्तव्य से अनुपस्थिति के लिए कोई आरोप-पत्र कभी जारी नहीं किया गया था, जिसके लिए वास्तव में याचिकाकर्ता ने अपने बेटे के माध्यम से आवेदन भेजा था, जैसा कि कारण हेतुक दर्शित सूचना (R-1) ke उत्तर के पैरा 1 के अवलोकन से दिखाई पड़ता है। विद्वक अधिवक्ता ने यह भी तर्क दिया कि याचिकाकर्ता ने 1975 से 1997 तक निष्कलंक सेवाएं प्रदान की है और कर्तव्य से अनुपस्तिथि के तुच्छ आरोप में सेवाएं से उनकी पदच्युति, जिसे अनुपात से बाहर उड़ा दिया गया है और इसे सेवा से पदच्युति करके पेंशन के लाभ से वंचित करने का आधार नहीं बनाया जा सकता है। उसने बल दिया है कि उत्तरदाताओं के पास याचिकाकर्ता को अनिवार्य रूप से सेवाएंनिवृत्त करने का पर्याप्त विकल्प था। उसने अपने समर्थन में, विद्वक अधिवक्ता ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय के मामला **हुसैनी** *बनाम* **इलाहाबाद उच्च न्यायालय के न्यायपालिका के माननीय मुख्य न्यायाधीश और अन्य, (1)** के फैसले पर निर्भरता बनाई है।

(1) AIR 1985 S.C. 75

(7) हालांकि, श्री हरीश राथे, विद्वक राज्य अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि नियमों के नियम 7 के प्रावधानो का धार्मिक रूप से पालन किया गया हैं और जांच अधिकारी या दण्ड प्राधिकारी द्वारा कोई चूक नहीं हुई है जिस से यह सार निकाला जा सके कि जांच अधिकारी द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्ष ख़ारिज किए जाए। विद्वक राज्य अधिवक्ता के अनुसार किसी भी अनियमितता या अवैधता के अभाव में ऐसे मामलों में हस्तक्षेप करना उचित नहीं है। विद्वक अधिवक्ता ने यह भी प्रस्तुत किया है कि मंजूरी के बिना कर्तव्य से अनुपस्थिति एक कदाचार है जो पदच्युति के चरम दंड को आकर्षित कर सकता है और दण्ड प्राधिकारी द्वारा दिए गए दंड से विचलित होने की कोई जगह नहीं है जो अपीलीय और संशोधन प्राधिकरण द्वारा कायम रखा गया है।

(8)हमने दोनों पक्षों के विद्वक अधिवक्ता द्वारा दिए गए तर्को पर सोच-समझकर विचार किया है और यह राय है कि यह याचिका अनुज्ञात करने योग्य है। आरोप-पत्र का अवलोकन यह दर्शाता है कि याचिकाकर्ता के खिलाफ चार आरोप लगाए गए थे। पहला आरोप यह था कि वह अपने हक्का से 10 सितंबर, 1997 से 21 दिसंबर, 1997 तक लगातार बिना अवकाश / अंतरंगता के लिए आवेदन दिये अनुपस्थित रहा और दूसरा कि वह अपना स्पष्टीकरण देने में और हलका में वह प्रस्तुत होने में विफल थे। तीसरा आरोप यह था कि उन्होंने कभी अपने काम में दिलचस्पी नहीं ली, जिस से छबीलदास, पटवारी को हलका का प्रभार दिया गया था और कि वह सरकारी कार्यों में रुचि न लेने में और अवज्ञाकारी होने में अभ्यस्त हैं। जांच अधिकारी ने याचिकाकर्ता को 10 सितंबर, 1997 से 21 दिसंबर, 1997 तक कर्तव्य से अनुपस्थित होने के आरोप का दोषी पाया। रिकॉर्ड पर ऐसा कुछ भी नहीं है जो यह दर्शाता हो कि याचिकाकर्ता ने अपने प्रधान के किसी भी आदेश की अवज्ञा की हो। यह भी स्पष्ट है कि 1 जनवरी, 1998 से 24 सितंबर, 1998 की अवधि में अनुपस्थिति के संबंध में कोई आरोप नहीं लगाया गया है और न ही उस संबंध में कोई अवसर दिया गया है। याचिकाकर्ता द्वारा कारण हेतुक दर्शित सूचना (R-1) के उत्तर का अवलोकन यह दर्शाता है कि याचिकाकर्ता ने 1 जनवरी, 1998 से 24 सितंबर, 1998 की अवधि के संबंध में आरोप को स्वीकार नहीं किया। उसने, वास्तव में, निम्नलिखित कहा है: -

> "1. मैं 10 सितंबर, 1997 से 21 दिसंबर, 1997 तक और 1 जनवरी, 1998 से 24 सितंबर, 1998 तक बीमारी के कारण हलाका कार्यालय में प्रस्तुत नहीं हो पाया। मैंने निजी चिकित्सक से अपना उपचार करवाया है। मुझे उस अवधि का वेतन भी नहीं मिला, जिसके दौरान मैं अनुपस्थित रहा। इस अवधि के दौरान, मैंने अपने बेटे के माध्यम से असन्ध तहसील के कार्यालय में अवकाश आवेदन भेजा है।"

(9) उपर्युक्त पैरा का अवलोकन यह दर्शाता है कि याचिकाकर्ता ने अपने बेटे के माध्यम से अवकाश का आवेदन भेजने का और यह भी कि उसने अपनी बीमारी का उपचार निजी चिकित्सक से करवाने का दावा किया था। हालांकि, दण्ड प्राधिकारी द्वारा आदेश दिनांक 15 जून, 1999 (P-1) के माध्यम से याचिकाकर्ता को बाद की अवधि के लिए भी, जो की 1 जनवरी, 1998 से 24 सितंबर, 1998 है, कर्तव्य से अनुपस्थिति का दोषी पाया गया है। पहला, याचिकाकर्ता को उपर्युक्त अवधि के संबंध में कोई आरोप-पत्र जारी नहीं किया गया था जिससे प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का पूरी तरह से उल्लंघन हुआ है। इसके अतिरिक्त, याचिकाकर्ता ने उपर्युक्त अवधि के संबंध में अपने बेटे के माध्यम से अवकाश आवेदन कार्यालय को भेजने का दावा किया था। यह सत्य है कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय के अनेक मामलो के निर्णयों द्वारा, जैसे की **भारत संघ** *बनाम* **परमानंद, (2) बी.सी. चतुर्वेदी** *बनाम* **भारत संघ, (3) परिधान निर्यात संवर्धन परिषद** *बनाम* **ए.के. चोपड़ा, (4)** दण्ड के परिमाण में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है। हालांकि, यह भी उतना सत्य है कि अगर प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन पाया जाता है तो न्यायालय दण्ड के परिमाण में हस्तक्षेप कर सकता है। यह सिद्धांत "वेडनसबरी सिद्धांतों" के रूप में लोकप्रिय है, जिसका संदर्भ माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **ओम कुमार** *बनाम* **भारत संघ, (5)** में किया गया है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पैरा 26 में **एसोसिएटेड प्रांतीय चित्र सदनों** *बनाम* **वेडनेसबरी निगम, (6),** मामले में लॉर्ड ग्रीन के विचारों पर निर्भरता ली गई है और निष्कर्ष पैरा 71 में दर्ज किया गया है। उपरोक्त पैरा यह कहते है: —

> "26. लॉर्ड ग्रीन ने 1948 में वेडनेसबरी मामले में कहा, (1947) 2 All ER 680 (CA), कि जब क़ानून ने प्रशासक को एक निर्णय लेने के लिए विवेक दिया है, तो न्यायिक समीक्षा का दायरा सीमित रहेगा। उन्होंने कहा कि हस्तक्षेप की अनुमति तब तक नहीं है जब तक कि निम्नलिखित में से एक या अन्य दी गई शर्तें संतुष्ट हो, अर्थात् आदेश क़ानून के विपरीत था, या प्रासंगिक कारकों पर विचार नहीं किया गया था, या अप्रासंगिक कारकों पर विचार किया गया; या निर्णय वह था जिसे कोई भी उचित व्यक्ति नहीं ले सकता था। इन सिध्दांतो का पालन लगातार यूके और भारत में प्रशासनिक कार्रवाई की वैधता का फ़ैसला करने के लिए किया जाता है। यह समान रूप से जाना जाता है कि 1983 में, लॉर्ड डिप्लॉक ने सिविल सेवाएं संघ की परिषद *बनाम* सिविल सेवाएं मंत्री, (1983) 1 AC 768 (जिसे GCHQ मामला कहा जाता है) में प्रशासनिक कार्रवाई निम्नलिखित में से एक या अन्य जैसे

(2) (1989) 2 S.C.C. 177
(3) (1995) 6 S.C.C. 749
(4) (1999) 1 S.C.C. 759
(5) (2001) 2 S.C.C. 386
(6) (1947) 2 All England Reports 68

की, अवैधता, प्रक्रियात्मक अनियमितता और तर्कहीनता के आधार पर की न्यायिक समीक्षा के सिद्धांतों को संक्षेप में प्रस्तुत करता है। हालाँकि, उन्होंने कहा कि "आनुपातिकता" एक "भविष्य की संभावना" है।

XXX XXXX XXXX XXXX XXXX

XXX XXXX XXXX XXXX

71. अर्थात्, उपरोक्त सिद्धांतों और निश्चित मामलों से, यह अभिनिर्णित है कि जहां प्रशासनिक निर्णय से संबंधित अनुशासनात्मक मामलों में दण्ड पर अनुच्छेद 14 के तहत "मनमाना" होने पर सवाल उठाया जाता है, वहाँ माध्यमिक समीक्षा प्राधिकरण के रूप में न्यायालय वेडनेसबरी सिद्धांतों तक ही सीमित होती है। यह न्यायालय प्राथमिक समीक्षा प्राधिकरण के रूप में आनुपातिकता का प्रयोग नहीं करेगा क्योंकि इस संदर्भ में मौलिक स्वतंत्रता का कोई विवाद नहीं है न ही अनुच्छेद 14 के तहत भेदभाव है। न्यायालय को दण्ड की समीक्षा करते समय और यदि वह संतुष्ट हैं कि वेडनेसबरी सिद्धांतों का उल्लंघन किया गया है, तब आम तौर पर मामले को प्रशासक द्वारा दण्ड के परिमाण के संदर्भ में नए निर्णय के लिए भेजा जाना चाहिए। केवल दुर्लभ मामलो में जहां अनुशासनात्मक कार्यवाही में और न्यायालय द्वारा लिए गए समय में दीर्घ विलंभ है और ऐसे चरम या दुर्लभ मामलों में न्यायालय दण्ड के परिमाण के रूप में स्वयं के दृष्टिकोण को स्थानापन्न कर सकती है।"

(10) एक संविधान न्यायपीठ के पास मामला **रामेश्वर प्रसाद (VI)** *बनाम* **भारत संघ (7)** में इन सिद्धांतों को संक्षेप में बताने का एक और अवसर था। पैरा 242 में, न्यायमूर्तियों ने वेडनसबरी सिद्धांतों के सही रूप से समझाने के लिए दिशानिर्देश जारी किए और उसी के तहत कहा है: -

"242. वेडनसबरी सिद्धांतों को अक्सर गलत समझा जाता है कई उनका अर्थ है किसी भी प्रशासनिक निर्णय, जो न्यायालय द्वारा अनुचित माना जाता है, को ख़ारिज करना। <u>वेडनसबरी सिद्धांतों की सही रूप से समझ यह है कि एक निर्णय को वेडनसबरी भावना में अनुचित कहा जाएगा अगर (i) यह पूरी तरह से अप्रासंगिक पदार्थों या पूरी तरह से अप्रासंगिक विचार पर आधारित है, (ii) इसने बहुत प्रासंगिक पदार्थों को नजरअंदाज किया है जिसे इसे ध्यान में रखना चाहिए था, या (iii) यह इतना विवेकहीन है कि कोई भी समझदार व्यक्ति कभी नहीं उस तक पहुँच सकता था।"</u> (बल दिया गया)

(7) (2006) 2 S.C.C. 1

(11) जब सिद्धांतों को पूर्वोक्त निर्णयों को प्रस्तुत मामले के तथ्यों पर लागू किया जाता है तब यह स्पष्ट होता है कि दण्ड प्राधिकरण ने ध्यान में रखा था कि 1 जनवरी, 1998 से 24 सितंबर, 1998 की अवधि में याचिकाकर्ता कर्तव्य से अनुपस्थिति था जिसका कारण उसने अपनी खोज में दर्ज किया कि याचिकाकर्ता ने कारण हेतुक दर्शित सूचना के उत्तर (R-1) में अपनी अनुपस्थिति स्वीकार की है। यह 10 सितंबर,1997 से 21 दिसंबर, 1997 के तीन महीने की अनुपस्थिति की अवधि के अतिरिक्त है जिसके लिए अकेले अपराध दर्ज किया गया था। हालाँकि, याचिकाकर्ता द्वारा भेजे गए उत्तर (R-1) का पैरा 1 दर्शाता है कि यह स्वीकारोक्ति नहीं होगी क्योंकि याचिकाकर्ता ने अपने बेटे के माध्यम से अवकाश आवेदन भेजने का दावा किया है। इस निष्कर्ष का अनुमान नहीं दिया गया कि याचिकाकर्ता ने अपने कार्यकाल में अनुपस्थिति स्वीकार की है और न ही 1 जनवरी, 1998 से 24 सितंबर, 1998 की अवधि के संदर्भ में ऐसे निष्कर्ष पर आया जा सकता है। यह अच्छी तरह से स्थापित है कि वह कथन को स्वीकारोक्ति माना जाता है उसे समग्र रूप से पढ़ा जाना चाहिए और संदर्भ से बाहर नहीं फाड़ा जा सकता है। हम आगे पाते हैं कि किसी भी आदेश की अवज्ञा करने के लिए अपमान का आरोप साबित नहीं हुआ क्योंकि उसके प्रभाव में रिकॉर्ड पर कोई साक्ष्य नहीं है। अंतः, रमेश्वर प्रसाद के मामले में दिए गए दिशानिर्देशों के अनुसार, वेडनेसबरी सिद्धांतों का उल्लंघन हुआ है। तदनुसार, हमारे द्वारा दो दिशाप्रणालियाँ का अनुसरण किया जा सकता है (i) उत्तरदाताओं को मामले का पुनर्परीक्षण करने के लिए निर्देश देना; या (ii) अपने अधिकार क्षेत्र का ख़ुद प्रयोग करे। हालाँकि, हम दूसरे विकल्प का लाभ उठा रहे हैं इस करणों से कि इस मामले में जांच रिपोर्ट 13 फरवरी, 1999 को प्रस्तुत की गई थी और याचिकाकर्ता को सेवाएं से पदच्युत करने का आदेश 15 जून, 1999 (P-1) को पारित किया गया था। सात साल से अधिक की अवधि पहले ही बीत चुकी हैं। इसलिए, हम यह निष्कर्ष पर पहुँचे है कि पदच्युति के आदेश को अनिवार्य सेवाएंनिवृत्ति में से एक में परिवर्तित किया जाना चाहिए क्योंकि याचिकाकर्ता ने लगभग 24 वर्षों की लंबी सेवाएं प्रदान की है। यह न्याय के सभी स्तंभों को पूर्ण करेगा क्योंकि याचिकाकर्ता पेंशन और अन्य सभी पेंशन लाभों का हकदार होगा। तदनुसार, उत्तरदाताओं को निर्देशित किया जाता कि वह याचिकाकर्ता को 1 जुलाई, 1999 की तिथि से सेवा से सेवाएंनिवृत्त माना जाना चाहिए और इस आधार पर सभी सेवाएंनिवृत्त लाभों की गणना की जानी चाहिए और याचिकाकर्ता को इस आदेश की एक प्रति उनके द्वारा प्राप्त होने की तारीख से तीन महीने में इनका भुगतान होना चाहिए।

(11)उपरोक्त शर्तों पर रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

R.N.R.

अस्वीकरण: *स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए निर्णय का अंग्रेज़ी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त होगा।*

रूहेला
प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी
Trainee Judicial Officer
करनाल, हरियाणा